Year-1, Volume-1(2) (October - December) 2015 ISSN : 2350-0816

शोध-निस्यन्द

जैनविद्या एवं प्राच्य विद्याओं पर केन्द्रित
(अंतर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका)

सम्पादक
मनीष कुमार जैन
(प्राकृताचार्य)

सह-सम्पादक
राजा पाठक

प्रकाशक
सौरभ जैन/रेणु जैन
बिरदोपुर, महमूरगंज, वाराणसी

अनुक्रमणिका

क्र.	शोध पत्र का शीर्षक	लेखक	पृष्ठ सं0
1.	नियमपाहुड का दार्शनिक चिन्तन	प्रो० (डॉ.) कमलेश कुमार जैन	01–05
2.	समाधिमरण सल्लेखना संथारा के पात्र	प्रो० अशोककुमार जैन	06–09
3.	आचार्यश्री महाश्रमण	प्रो. हरिशंकर पाण्डेय	10–13
4.	ज्योतिषशास्त्रे रोगनिर्धारकतत्वानि	डॉ. शत्रुघ्न त्रिपाठी	14–15
5.	बनारस की हिंदी पत्रकारिता का विकास क्रम प्रारंभ से लेकर आधुनिक ऑनलाइन तकनीकि युग तक	डा. विवेकानन्द जैन	16–18
6.	नाट्यशास्त्र में भाषा-विधान (प्राकृत भाषा के विशेष संदर्भ में)	डॉ. पंकज कुमार जैन	19–21
7.	मध्य भारत के प्रमुख शिक्षा केन्द्र	डा० विजय कुमार पाण्डेय	22–23
8.	हिन्दू–धर्म एक सिंहावलोकन	डॉ० विवेका नन्द तिवारी	24–26
9.	जैन परम्परा पोषित ध्यान के विविध भेद	डॉ. आनन्द कुमार जैन	27–29
10.	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में जैन पाठ्यक्रम	प्रो० कमलेश कुमार जैन	30–31
11.	सराग एवं वीतराग सम्यग्दर्शन : एक चिन्तन	डॉ. आलोक कुमार जैन	32–34
12.	एक स्त्री की मूक-वेदना : जैनेन्द्र कुमार कृत कहानी 'पत्नी' में	अनामिका जैन	35–36
13.	शास्ता बुद्ध का पर्यावरण : एक विश्लेषण	डॉ. रमेश प्रसाद	37–40
14.	नक्षत्राश्रितरोगविमर्शः	राजापाठक	41–42
15.	सप्तभङ्गी – वादस्य स्वरूप विमर्श:	कमलेश कुमार जैन	43–45
16.	नेत्ररोगस्य शास्त्रीयकारणानि	डॉ. शत्रुघ्न त्रिपाठी	46–47
17.	ज्ञानार्णव ग्रन्थ में लोकधर्म, परिवार, समाज एवं राष्ट्र के उत्थान में	शैलेन्द्र कुमार जैन	48–50
18.	अन्योक्ति अलङ्कार के सन्दर्भ में भामिनीविलास	बीर बली मौर्य	51–53
19.	पर्यावरण संरक्षण में नैतिक शिक्षा का अवदान	डॉ. चञ्चला पाण्डेय	54–56
20.	पुराणेषु ज्योतिष-सिद्धान्त-शास्त्रस्य लौकिकं महत्त्वम् वा पुराणेषु ज्योतिष-सिद्धान्त-शास्त्रस्य वैशिष्ट्यम्	सुवाष पाण्डेय:	57–58
21.	स्वस्तिक: एक प्रतीक चिन्ह	डॉ० रुपा जैन	59–60
22.	संगीत के क्षेत्र में मंच की भूमिका व महत्व	अलका गिरि	61–63
23.	तबले के लखनऊ घराने का उद्भव एवं विकास	डॉ. शालिनी सक्सेना	64–65
24.	जैन दर्शन में कर्मवाद	जोगेन्द्र मित्र	66–68
25.	श्री सिद्धचक्र महामंडल विधान	मनीष कुमार जैन	69–71
26.	वेदापौरुषेयत्ववाद	प्रदीप कुमार दीक्षित	72–75
27.	जैनन्यायस्य आधारग्रन्थ: - आप्तमीमांसा	प्रताप सिंह	76–77

संगीत के क्षेत्र में मंच की भूमिका व महत्व

अलका गिरि*

मानव के भावों एवं अनूभूतियों की अभिव्यक्ति का नाम "कला" है। "कला" केवल भावों का प्रदर्शन ही नहीं करती अपितु अध्यात्मिक संदेश का वाहक भी होती है। "कला" इतिहास का स्वंय एक शक्तिशाली प्रभाव है। आदिम जीवन समाप्त हुआ, परन्तु कला जीवित हैं। जीवन के विभिन्न अनुभवें का मूल्य समझने के लिए "कला" की आवश्कता अनिवार्य है। परमात्मा की अनुकृति की विशिष्टतम संज्ञा कला है। होता जिसके पीछे सत्य, शिव और सौन्दर्य का समन्वयात्मक भाव निदर्शन होता है। कला के माध्यम से किसी भी देश की संस्कृती गैरव तथा उसके विकास और उत्थान का परिचय मिलता है। कला का प्रधान साधन 'कल्पना' हैं। कलाकार सामाजिक जीवन से दुर जाकर केवल आश्चर्य का सृजन करता है। कल्पना के पश्चात् कलाकार चित्त को एकाग्र कर ध्यान योग द्वारा कृतियों का सृजन करता है। अत एव चित्त एंव ध्यान योग को भी कला में प्रमुख स्थान देते हैं।[1]

भारतीय चिंतन के अनुसार चौसठ कलाएं मानी गई हैं। किन्तु "ललित कला" अन्य कलाओं से कुछ विशिष्ठता रखती हैं। जिसमें संगीत कला सबसे प्रमुख हैं। कला के संदर्भ में चलचित के प्रसिद्ध कलाकार "नाट्याचार्य "पृथ्वीराज कपूर" साहब ने कला को संबोधित करते हुए कहा है कि :– हाथ पैर से होने वाला काम मजदुरी है, जब उसमे दिमाग की शक्ति का योग हो जाता है तो वह कारीगरी बन जाती है, तथा जब उसमें दिल का भी समावेश हो जाता है तो वह "कला" के रूप में और खिल उठता है।[2] भारत की सभी कलाएं यहा की अध्यात्मिक संस्कृति से प्रभावित रहा हैं। संगीत के लिए प्रबद्ध जनों के समाज में सदियो से यही धारणा बनी हुई है कि संगीत अध्यात्मिक रस एंव सात्विकता का सौम्य रूप हैं और यही अखण्ड रस, आन्नद एंव मुक्तावस्था की प्राप्ति का सशक्त माध्यम हैं। संगीत केवल सुनने एंव देखने के लिए मनोरंजन का साधन मात्र नही है; अपितु यह मनुष्य के मन को एक असाधारण ऊँचे स्तर पर ले जाने की क्षमता रखता हैं। संगीत का लक्ष्य व्यक्ति में उदात्त भावनाओं के आरोपित करना है। ह्रदय के भावो को आध्यात्मिक उत्कृष्टता मिले, भक्ति भावों का निरन्तर उत्कर्षण होता रहे तभी संगीत की वास्तविकता परिलक्षित होती हैं। संगीत मानव समाज की कलात्मक उपलब्धियों और संगीतिक सांस्कृतिक परम्पराओं का मूर्तिमान प्रतिक हैं। यह आदिम काल से जन जीवन के आत्मिक उल्लास और सुखानु– मुर्तियों की अभिव्यक्ति का मधुरता माध्यम रहा हैं।

संगीत का मानव जीवन पर प्रभाव ढूढने के लिए संगीत के क्रमिक विकास पर विचार आवश्यक हैं। यदि आप हम मानव जीवन में संगीत के महत्व को बताते हुए किसी ने यह भी कहा है कि–

साहित्य संगीत कलाविहीनः। साक्षात् पशुः पुच्छविषाणहीनः।।

अर्थात जो मनुष साहित्य और संगीत कला से सर्वथा अनभिज्ञ होता है। वह बिना सींग और पुछ के साक्षात् पशुतुल्य होता है। अर्थात भारतीय संस्कृति में कला–साधना का उद्देश्य "स्वान्तः सुखाय" का दृष्टिकोण ही रहा है और अनेक कलाकारों ने अपनी कला का सृजन इसी उदेश्य को सम्मुख रख कर किया भी हैं। कला के क्षेत्र में कलाकार अपनी कला में जितना रस स्वयं लेता है, उतना ही रस वह दुसरों को भी देना चाहता और यदि कोई एक भी साझीदार मिल गया तो कलाकार की आनन्द की सीमा नहीं रहती। वह कला मर्मज्ञों पर न्योछावर हो जाता हैं। दिन प्रतिदिन उसकी कला उन्नति की ओर बढ़ती चली जाती है। उसकी कल्पना में नया जीवन और नई स्फूर्ति आने लगती है। कलाकार के हाथ से आनन्द की असीम धारा लोंगो को अपनी रसात्मकता का बोध कराने के लिए स्वतः उमड़ पड़ती है और जब तक जनता भी उस रूप में आनंदित नहीं होती तब तक कलाकार को संतोष नहीं प्राप्त होता है। प्रत्येक कलाकार अपनी कलाकृति के लिए दुसरो का विचार जानना चाहता हैं। लोगों पर अपनी कला की प्रतिक्रिया जान लेने के पश्चात् ही कलाकार को अपनी कला का विश्वास के फलस्वरूप हृदय में स्थायी सुख प्राप्त होता है।[3]

अतः इस भावना को प्रकट करने के लिए एक प्रमुख स्थान कि आवश्यकता हुई, जहाँ से वह अपनी भावनाओं को प्रकट कर सके। अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिए कलाकार को जिस स्थान की आवश्यकता हुई; उसे ही मंच का नाम दिया गया और वही से मंच प्रदर्शन का उद्भव हुआं मानव जीवन में मंच शब्द अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा हैं। संगीत में मंच एवं मंचप्रदर्शन एक अनिवार्य अंग रहा हैं। यह साधक को आनन्द से परमानन्द तथा परमेश्वर का सानिध्य तो देता है, पर मानव मात्र के मन को परिष्कृत करता हुआ अत्यन्त सुख देता है। इस प्रकार कलाकार व साधक के साथ–साथ श्रोताओं को भी अपने संग एक अवर्णनीय मनः स्थिति को प्राप्त करता है। मंच शब्द में तीन प्रमुख पक्ष होते है; कलाकार, श्रोता एवं अयोजक चुंकि मंच प्रर्दशन में कलाकार के साथ श्रोता भी अभिन्न अंग होता हैं। जहाँ भी कलाकार या मानव गान करता है तथा श्रोता विद्यमान है वही मंच सम्पन्न होता है। "मंच" एवं मंच प्रदर्शन शब्द भले ही नया हो परन्त इसका प्रादुर्भाव वैदिक काल से ही माना जा सकता है। प्राचीन काल में ब्रह्मणों के द्वारा मंत्रों का गान, यज्ञ एवं हवन एक विशेष स्थान का निर्माण करके होता था, जिसे मंच कहा गया। हम यह भी कह सकते है कि यदि कोई व्यक्ति जब अपने बात को कहने या बताने का प्रयास करता हो या समझाना चाहता है, तो जब वह किसी ऊँचे स्थान पर खड़ा हो कर ऊँचे शब्द में लोगों को कहे तो अनावश्यक ही सभी का ध्यान उसकी ओर चला जाता हैं और लोग उसकी बात पर गौर करते हैं। उस व्यक्ति के द्वारा लोगों तक अपनी बात पहुचाने में वो स्थान जहाँ से वो अपनी बात को कहता है वह स्थान उसके लिए मंच के रूप में प्रयोग हुआ। प्राचीन से लेकर वर्तमान तक मनुष्य के द्वारा अपने भावो या कला की अभिव्यक्ति जिस स्थान से होती है वही स्थान उस व्यक्ति या कलाकार के लिए 'मंच' और भावनाओं का प्रदर्शन "मंच प्रदर्शन" का कार्य हुआ।

"मंच" शब्द आया कहाँ से तथा इसका उपयोग क्या है? इस वाक्य की पुष्टी करते हुए, मेरे पुछे गये प्रश्न पर मंच शब्द के बारे में आदरणीय प्रो० ऋत्विक सान्याल जी[4] ने बताया की "मंच" शब्द की उत्पत्ति आसन से माना जा सकता हैं। चुंकि प्राचीन में इस शब्द की कही भी चर्चा नही है। इसलिए इसे आसन की संज्ञा दे सकते है गुरू अपने शिष्य को ज्ञान की बात बताता है तो निश्चितत: उस गुरू का शिष्य के बैठने के स्थान से कुछ ऊँचा होता है। अतः जब गुरू के द्वारा जो ज्ञान का निर्वाह शिष्य तक होता है उत्पन्न होती हैं उसका प्रवाह ऊपर से निचे की ओर होता है और वह ऊर्जा ईश्वर की ओर से प्राप्त होता है जो गुरू से होता हुआ शिष्य तक ज्ञान के रूप में पहुँचता हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यह ऊर्जा एक चक्र के समान होता है जो ऊपर से निचे की ओर प्रवाहित होती हैं। यह जो गुरू का स्थान और उनके विराजमान होने का आसन ही "मंच" के रूप में परिवर्तीत हो गया।

---

* शोधच्छात्रा, नृत्य विभाग, संगीत एवं कला मंच संकाय, का. हि. वि. वि. वाराणसी ।

संगीत की प्रारम्भीक अवस्था में लोकगीत या धुनों का रूप विद्यमान था। लोग अपनी हर अवस्था जैसे खुशी दुःख, राजा की बड़ाई, त्योहारों, इत्यादी सभी बातों को लोग गाकर कहते थे। मंच एवं मंच प्रदर्शन, प्राचीन काल से से ही प्राप्त होता है पर यह शब्द आधुनिक युग में अधिक प्रचलित हो गया है। मूलतः मंच शब्द का प्रायेग रंग मंच में होता रहा है। लक्ष्मी नारायण लाल जी अपने ग्रंथ रंगमंच देखना और जानना में रंग तथा मंच की इस प्रकार व्याख्या की है।

रंग – रंग को वर्ण के रूप में व्याख्या करते हुए इसका अर्थ समूह में अपने आप को अभिव्यक्त करने वाले अक्षर जो छन्द और रस से बने होते है माना गया है। साथ ही साथ इसे मंगल कार्य करने वाली सरस्वती तथा गणेश की संज्ञा भी दी गई है।

मंच– लक्ष्मीनारायण लाल ने मंच की परिभाषा Oxford Dictionary की व्याख्या को स्वीकृति दी है– "Stage is platform boards, the part of a theater of which the actor perform the acting performance" अर्थात विभिन्न रंगो का प्रदर्शन जीवन के विभिन्न भाव जो स्वयं में भिन्न–भिन्न रसों को समाऐ हुए हो, वह स्थान आदिकाल से भी रंगभूमि एवं नाट्य मंडप जैसे शब्दों को प्रयोग रंगमंच के लिए होता था।[5]

मंच का उपयोग मूलतः भाषण, कविता पाठ, गायन, वादन एवं नृत्य के लिए किया गया। जन मन रंजन के लिए मनुष्य गायन वादन नृत्य प्रस्तुती के लिए मंच का प्रयोग किया गया। प्राचीन समय में राजाओं के दरबार में राजा तथा दरबारियों के मनोरंजन के लिए कलाकार अपनी कुशलता का परिचय देते थे। मंच प्रदर्शन का प्रयोजन अपने आप को सर्वोत्तम सिद्ध करना था। मंच प्रदर्शन के लिए कलाकार को अत्यधिक परिश्रम और साधना अनेक वर्षो तक करना पड़ता है। उनके गायन के गुण, दोषों का अध्ययन कर दोष रहित बनाने का प्रयास भी करना चाहिए। समय के साथ तथा स्थान और श्रोता की रूची पर भी कलाकार के ध्यान देना आवश्यक हैं। चूंकि संगीत मात्र श्रावणेन्द्रीय विषय नहीं है अपितु श्रोताओं को अपने दैनिक जीवन की कठिनाईयों से पिड़ीत चित्त को शांत एवं संतुष्टि देने वाला एक अमूल्य औषधी है। संगीत सारे विश्व में प्रचलित है तथा ऐसा कोई स्थान या देश नहीं जहाँ अपना संगीत ना हो। भारतीय संगीत अपने आप में सर्वप्राचीन एवं अलौकीक आनंद प्रदान करने वाला संगीत है। भारत रागदारी संगीत की एक ऐसी कला है जो नाद पर प्रसिद्ध है। स्वर समूह मन, मास्तिष्क तथा दिमाग इत्यादी सबको प्रभावित करने की शक्ति रखता हैं। श्रोताओं तथा दर्शको को चित्तवृत्ति सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त होकर मंच प्रदर्शन में एकाग्र होकर काल्पनिक रस एवं भावों की दुनिया का सृजन कर उसमें तल्लीन हो जाता हैं कलाकार की समता तथा असीम भावपूर्ण प्रदर्शन ही एक मात्र ध्येय मानव भाग को संतुष्ट एवं आनंदीत करता है।

कलाकार की निरंतर साधना से कला मे नित्य नई नवीनता सोच के साथ परंपरागत सौन्दर्य की स्थापना संभव है। देश–विशेश में कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन कर विजय ध्वजा फहराते है अतः मंच का प्रयोग गायन, वादन नृत्य कला का प्रदर्शन श्रोताओं में कला के प्रति रूची को बढ़ाने के लिए किया जाता है। यदि हम देखे तो हमारे प्राचीन ग्रंथ एवं वैदिक काल में भी मंच का प्रयोग कही ना कही हर रूप में किया जाता रहा है। संगीत के मूल ग्रंथ के रूप में भी मंच का प्रयोग नाट्य मंडप में किया गया है जिसका वर्णन नाट्य शास्त्र ग्रन्थ में प्राप्त होता है। नाट्य शास्त्र के समय में नाटको की प्रस्तुती के लिए मंच का प्रेक्षागृह के निर्माण का उल्लेख मिलता हैं। उससे पूर्व भी वैदिक युग, पुराणकाल तथा महाकाव्य काल में इस प्रदर्शन का व्यवहार होता था। वैदिक काल में गाथाओं का गान वीणा के साथ किया जाता था। मंच शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता था परन्तु यह सर्वविदित है कि गायन, वादन तथा नृत्य आदि दर्शक तथा श्रोताओं की सुविधा के लिए कुछ ऊँची स्थान के मध्य में ही मानी की व्यवस्था उचित रखी जाती थी। ब्राह्मण भी मंत्र पाठ करते समय ऊँचे आसन पर विराजमान होते थे। इसी व्यवस्था को आगे चलकर मंच का नाम दिया गया।[6]

"संगीत को हम प्रदर्शनकारी कला के नाम से जानते हैं। और इसी कला के प्रदर्शन में हम मंच का उपयोग करते है। मंच पर कलाकार के लिए एक परिसीमा का निर्माण किया जाता है, जिसके दायरे में रहकर ही कला का प्रदर्शन किया जाता है। कलाकार और श्रोता के बीच एक ऐसे स्थान का निर्माण किया गया, जिसे ना तो कलाकार उस सीमा का उलंघन करे और ना ही श्रोता। इसी सीमा का निर्माण मंच के रूप में हुआ।"

किसी भी कार्यक्रम में मंच प्रदर्शन में कलाकार को अपनी कला का प्रदर्शन करते समय श्रोताओं की रूची का सम्मान करते हुए तथा अपनी कला की शास्त्रीयता कायम रखते हुए कार्यक्रम को सफल बनाने की चेष्टा करनी चाहिए। एक कलाकार के लिए मंच एवं श्रोता एक अभिन्न अंग है। यदि वह कलाकार श्रोता का मनोरंजन करने में अपनी तथा कला के स्तर को बनाए रखता है जो उसका प्रमुख कर्तव्य है तभी उसका प्रदर्शन श्रोता के चिन्त को आनन्द की अनुभुती प्रदान करता है।

अतः एक कलाकार के लिए मंच एक सफल माध्यम है उसकी कला को प्रमाणित कर लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए, मंच गायन, वादन एवं नृत्य की प्रस्तुती के लिए कलाकार को अपने व्यक्तित्व एवं कुशल प्रस्तुतीकरण द्वारा श्रोताओं के हृदय से संबंध स्थापित करता है। उसी प्रकार श्रोताओ की भूमिका कलाकार के कला कौशल भावपूर्णता आदि को परखना तथा शान्त चित्त होकर उक्त प्रस्तुतीकरण का रसास्वादन करना, कलाकार को प्रोत्साहित करना आदि उसकी उत्कृष्टतम् कला का प्रदर्शन करवाना ही एक श्रेष्ठ श्रोता का कार्य है। वर्तमान में मंच स्वतंत्र रूप में स्थापित हो चुका है। छोटे–बड़े ऐसे कई संस्थाए है जा इस क्षेत्र में कई वर्षो से कार्य कर रहे है। इन संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य है की मंच के माध्यम से कलाकार, शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत को अत्यधिक प्रसिद्धी प्राप्त हो सके। इन संस्थाओं ने कई अवसरों पर अनेक प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन भी करया जिनमें छोटे–बड़े कलाकार बड़े ही उत्साह के साथ अपनी कला का प्रदर्शन करते है। इन संस्थाओं में ऐसे कई व्यक्ति मिलकर अपनी अपार श्रद्धा कला के प्रति समर्पित करते है जिनके साथ उनका एवं कलाकार दोनों लाभान्वित होते है।

किसी भी कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य मात्र इतना हो कि जिस भी विषय वस्तु को लेकर वह समारोह हो रहा है उसके प्रचार में सहायक होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि संगीतिक कार्यक्रम में कार्यक्रम की सफल बनाने तथा शास्त्रीय संगीत के प्रति लोगों को आकर्षित करने में कलाकार एंव मंच का बहुत बड़ा हाथ होता हैं। प्राचीन काल में सांगितिक कार्यक्रम महफिल, बैठका या राज दरबारों में ही सम्पन्न हुआ करता था। इस समय भी सफल कार्यक्रम का प्रदर्शन होते थे। परन्तु बढ़ते समय के साथ एवं मुगल शासन काल में कहीं संगीत का उत्थान तो कही पतन भी हुआ। चुंकि संगीत का कार्यक्रम का प्रदर्शन धीरे–धीरे

स्वत्रंत रूप में होने लगा तथा यही संगीत राजदरबारो से बाहर आकार मंच पर प्रदर्शित हुआ। वैज्ञानिक उपकारणों का उपयोंग आधुनिक युग से प्रारम्भ हुआ। अतः पुराने समय में जब मंच पर कार्यक्रम हुआ करते थे तो उस समय खुले वातावरण में होने के कारण पिछे के व्यक्तियों को स्पष्ट सुनाई नही देता था। कलाकारों को भी अत्यधिक बलपूर्वक गाना पड़ता था। जब वैज्ञानिक उपकरणों का इस्तेमाल मंच पर होना प्रारम्भ हुआ तो इससे कलाकार एवं श्रोता दोनों को सुविधा होने लगी। चुकिं मेरा विषय भी इसी संदर्भ में है तो हमने पाया कि जीतना सफल कार्यक्रम प्राचीन में होते थे आज वह और भी सफल होने लगे। समय की मांग पर मंच को व्यवस्थित करने वाले आयोजक भी इस क्षेत्र में आगे आये और उन्होंने मंच की साज सज्जा एवं अन्य सुविधाओं पर ध्यान देते हुए कार्यक्रमों का आयोजन भी करवाते गए। जिससे कलाकार एवं श्रोताओं को सारी सुविधाओं के साथ कार्यक्रम का अनन्द और भी बढ़ता गया तथा कार्यक्रम सफलतापूर्वक होने लगे, जिसे छोटे–बड़े कलाकार भी लोकप्रिय होते गए। संगीत के क्षेत्र में मंच एक सफल माध्यम हैं लोगों तक भावनाओं का रसास्वादन कराने का, जो कलाकारों की कल्पना एवं अथक प्रयास से पूर्ण होता है। इस क्षेत्र में कई बड़े–बड़े मंच आज समाज में उपस्थीत है, जिसके माध्यम से शास्त्रीय एवं लोक संगीत का जो ह्रास हुआ है पुनः उसको स्थापित किया जा सकें।

सन्दर्भ

1. डॉ0 उपाध्याय, वासुदेव, प्राचीन भारतीय मूर्ति–विज्ञान, द्वितीय संस्करण 1982 चौखम्भा विद्या भवन, वारणसी, पृ0सं0–03
2. दीक्षित, प्रदीप कुमार "नेहरंग" सरस संगीत, द्वितीय संस्करण 2005 किशोर विद्या निकेतन, भदैनी, वाराणसी, पृ0सं0–112
3. श्रीवास्तव, प्रो0 हरिशचद्र, संगीत निबंध संग्रह, संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मलका इलाहाबाद मंच प्रदर्शन पृ0सं0–149
4. चावला, टीना, हिंदी नाटक और संगीत, वर्तमान परिपेक्ष में, प्रथम संस्करण 2011 संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0स0– 09
5 तिवारी, हरीश कुमार, मंच प्रदर्शन में कलाकार एवं श्रोता, प्रथम संस्करण– 2005 अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, पृ0सं0–07